



प्यारे किसान भाइयो बहनोँ,
प्यारे बच्चो, स्वराज साथियों,
संगठन के पदाधिकारी,वाग्धारा के समस्त साथियों
- जय गुरु !!

आप सभी को खरीफ फसल की हार्दिक शुभकामनायें !

हमारे क्षेत्र में ऐसा महसूस होता है कि मानसून की शुरुआत अच्छे से हुई है । 18 से 19 जून के आस -पास बारिश आनी शुरू हो गयी और ऐसी बरसात हुई कि जिसमे बुवाई की जा सके आशा है कि इस बार मानसून का दौर ठीक रहेगा और अच्छे से हम खेती कर पायेंगे । हर बार चर्चा में जो बात कही जाती है वही बात मैं इस पत्रिका के माध्यम से कहूँगा कि वैसे तो हमारे यहाँ सभी साथियों की बुवाई हो गयी होगी परंतु हम केवल मात्र एक ही फसल या एक ही खेती पर निर्भर नहीं रहे । हमारे लिए हमारी हांगडी खेती बहुत महत्वपूर्ण है ऐसा नहीं है हांगडी खेती मे कि एक बार बुवाई हो गयी उसके बाद संभव नहीं है, हमारा यह सही समय विभिन्न प्रकार की सब्जियाँ और पेड़ लगाने का भी है । हमारे हर परिवार में हम कम से कम पांच प्रकार के पांच पेड़ लगाये और इन्हें खेतो में लगाणा भी जरुरी नही है हम किस प्रकार से हमारे खेतो की मेड़ एवं हमारी अनुपयोगी जमीन पर लगाकर इसे उपयोगी बनाये यह हमारे लिए बहुत महत्वपूर्ण है ।

पुरी दुनिया में आदिवासी क्षेत्र परम्पराओं से वन आच्छादित क्षेत्र रहे है और आज भी कई खोई हुई प्रजातियाँ आदिवासी क्षेत्रों में पायी जाती है, जो पेड़ और वनस्पतियाँ खो रही होती है वो भी आदिवासी क्षेत्रों में देखने को मिल जाती है । हमारी जिम्मेदारी बनती है कि हम किस प्रकार से उन पेड़ो को हमारे यहाँ पुनः दूँद कर लगाये और विचार करे की आम, निम्बू, अमरुद, कटहल, पीपल, सीताफल, टिमरू, बड, पपीता ये सब हमारे यहाँ होंगे, अगर नहीं है तो हमे वैसे भी लगाणा ही चाहिए, परंतु ऐसे कौनसे पेड़ है जो हमारे यहाँ नहीं है, जो हमने सुने है और हम उपलब्ध नही करा सकते तो अपने परिवारों में पूछ करके भी हम वापस लगाये ।

इसी के साथ मुझे एक कहावत याद आती है कि आदिवासी क्षेत्रों में हम मकान में उलझ के रह गये, आदिवासी क्षेत्रों में हमारा कोई जमाना हुआ करता था जब हम हमारी झोपड़ियों की बाउंडी में जो लकड़ी होती थी वो सजीव होती थी और जो बाद में जलाने के काम आती थी । हमारे फर्नीचर और मकान बनाने के लिए भी हम हमारे बलिया, पाट वो सब हम हमारे घरो में ही तैयार करते थे, परंतु विगत कुछ समय से वो खोता जा रहा है। मैं आग्रह करता हूँ कि अभी हमारा बिल्कुल सही समय वृक्षा रोपण करने का, आप दूँदकर लगाये अगर नही मिले तो आप संगठन में चर्चा करें और सामूहिक रूप से अपने घर में लगाने का प्रयास करे ।

इसके साथ ही हमारे सामूहिक वनों का अपने आप में एक महत्व रहा है कई उदाहरण हमारे यहाँ देखने को मिलते है जिसमें हम इस प्रकार से हमारे गाँव और फले में सामूहिक वन को उपजा सकते है जो कि हमारी पीढ़ियों के लिए सुरक्षा का साधन बन सकता है, हमारी मिट्टी के कटाव को रोक सकता है, हमारे गाँव की पहचान बन सकता है, क्यों न हम हमारे गाँवो में इस प्रकार से पहचान रूपी कोई वृक्षारोपण करे और आने वाली पीढ़ियाँ उसका उदाहरण दे पाए । आज भी कई गाँवो के नाम हमारी वनस्पतियों के नाम पर है जिसका कारण था वहाँ पर पेड़ थे, और आज भी हम उस लकड़ी को निकालकर के काम में लेते है, मैं आपसे इस अंक के माध्यम से यह कहना चाहता हूँ की आप यह माह वनस्पति माह के रूप में मनायें, केवल मात्र पेड़- पौधे और फसले ही नही बल्कि छोटी वनस्पतियों को भी संभालकर के रखे जो बरसात में अपने आप उगती है और वो किस प्रकार से हमारी मदद कर सकती है हमारी आजीविका का साधन हो सकती है अगर हर परिवार पांच प्रकार कि दवाई की वनस्पति को दूँदकर उसको संभालकर के रखेगा तो हमारा क्षेत्र उसमे भी समर्द्ध हो पायेगा ।

मैंने वर्षा के पानी पर गत अंक में भी कहा था कि हमें हमारी मिट्टी, पानी, वनस्पति और मवेशियों और परिवार के सदस्यों का बरसात में विशेष रूप से ध्यान रखना है ताकि हम किसी भी दुर्घटना से बच पायें, हमारी मिट्टी और पानी बहकर जाता है तो भी एक दुर्घटना है । हमे उसे भी बचाकर रखना है, इसी के साथ आप सभी को इस माह के कार्यों के लिए तथा आगामी फसल के लिए बहुत -बहुत शुभकामनायें ।

जय- गुरु, जय- स्वराज !!!

आपका अपना

जयेश जोशी

खरीफ फसल में निराई-गुड़ाई का महत्व :

राजस्थान, मध्यप्रदेश और गुजरात की सीमा से लगे आदिवासी वागड़ क्षेत्र में खरीफ मौसम की शुरुआत के साथ ही किसान खेतों की तैयारी और बुवाई में जुट जाते हैं। इस क्षेत्र की पारंपरिक खेती पद्धतियों में निराई-गुड़ाई का विशेष महत्व है। क्षेत्र के आदिवासी महिला - पुरुष किसान-खुरपी, साबली व हाथ से निराई-गुड़ाई करते हैं। यह न केवल फसलों की सुरक्षा और उत्पादन बढ़ाने का तरीका है, बल्कि सामूहिक सहयोग, जैव विविधता संरक्षण और मिट्टी की उर्वरता बनाए रखने की पारंपरिक तकनीक भी है।

पीढ़ियों से चली आ रही इस आदिवासी परंपरा में निराई-गुड़ाई के साथ खेत में उगने वाली



उपयोगी भाजी, औषधीय वनस्पति और परागण मित्र जीवों का भी संरक्षण किया जाता रहा है। विगत कुछ वर्षों में बदलती कृषि प्रणालियों, रासायनिक खरपतवार नाशक के प्रचलन और आधुनिक मशीनों के उपयोग ने इस परंपरा को कमजोर बना दिया है। इससे खेतों में जैव विविधता में कमी, मिट्टी की संरचना पर प्रतिकूल प्रभाव, परागण कीटों की संख्या में गिरावट और सामूहिक श्रम संस्कृति भी प्रभावित हो रही है। साथ ही रासायनिक खरपतवार नियंत्रण विधियाँ खेत की उपजाऊ मिट्टी में मौजूद सूक्ष्मजीवों को भी नष्ट कर रही हैं, जिससे खेती की दीर्घकालीन उत्पादकता पर संकट खड़ा हो गया है। परंपरागत निराई-गुड़ाई के अभाव में खेतों में खरपतवार की अधिकता से फसल पैदावार में कमी और खर्च बढ़ने जैसी समस्याएँ भी सामने आ रही हैं।

खरपतवार के लाभदायक प्रभाव :

मिट्टी की दशा सुधारने में : बहुत सारी खरपतवारों की जड़े गहराई तक जाती है इसलिए ये मृदा में अधिक गहराई तक जाकर मृदा को मुलायम बनाती है जिससे मिट्टी का वातायन व जल धारण क्षमता सुधरती है। मृदा में उपस्थित खनिज पौषक तत्व पादपों को आसानी से उपलब्ध होते है साथ ही कुछ खरपतवार मृदा में नाइट्रोजन स्थिरीकरण करते है जो मृदा की उर्वरकता को बढ़ाते है।

आवास व भोजन स्रोत: खरपतवार बहुत सारे कीटों, पक्षियों तथा स्तनधारियों को आवास प्रदान करके जैव विविधता संरक्षण में अहम भूमिका निभाते है तथा परागणकारी कीटों एवं पीड़कों को निर्वासित करने वाले कीटों को आश्रय प्रदान करते है।

अपरदन रोधी : ऐसे क्षेत्र जहां मिट्टी का कटाव बड़ी समस्या है उन क्षेत्रों में खरपतवार जिनकी जड़ें बहुत गहरी होती है तथा पत्तियाँ बहुत चौड़ी होती है वे मिट्टी की कठोरता से आपस में बांधकर मिट्टी



के कटाव को रोकती है।

खरीफ ऋतू के कुछ उपयोगी खरपतवारों के आर्थिक व औषधीय उपयोग:

सेंजी – सेंजी पौधा बहुत ही छोटा तथा इसके पत्ते हृदय के आकार तथा 3 के समूह में होती है इसके पत्ते कच्चे या पकाकर खाए जाते हैं। सलाद में उपयोग ले सकते हैं या दूसरी हरी साग के साथ पकाकर खाया जाता है। इसका स्वाद थोड़ा खट्टा होता है। इसको अम्बोटी बूटी के नाम से भी जाना जाता है ।

औषधीय गुण:-

- यह बूटी बुखार, पेट दर्द, दस्त, पेशाब की जलन, चोट-मोच और सांप के काटने पर उपचार में फायदेमंद मानी जाती है।
- इसका रस मक्खन में मिलाकर फोड़े-फुंसी, सूजन और मांसपेशियों की चोट पर लगाया जाता है।
- बच्चों के पेट के कीड़े भगाने के लिए इसके पत्तों का पानी पिलाया जाता है।
- इसके पत्ते स्वाद में खट्टे होते है तथा यह बूटी विटामिन C से भरपूर होती है और स्कर्वी (सूखा रोग) में काम आती है।
- पत्तों का रस कीड़े के काटने, जलन और त्वचा के दाग पर लगाया जाता है।

बड़ी दुधी – इसका पौधा छोटा, दो पत्तियाँ आमने –सामने तथा पत्तियों के लगने के स्थान पर बीजों का गुच्छा लगा रहता है तथा इससे सफ़ेद रंग का दूध निकलता है।



औषधीय गुण :

- पेट के रोग जैसे दस्त, पेटिचा, पेट में कीड़े में फायदेमंद।
- दमा, खांसी, सांस की तकलीफ और बुखार-जुकाम में भी काम आती है।
- आंख आना (आंख में सूजन या फुंसी) में इसकी डंडी का रस लगाया जाता है।
- पत्तों की पुल्टिस (लेप) सूजन, फोड़े-फुंसी पर लगाया जाता है।
- यह बूटी खून का दबाव (ब्लड प्रेशर) घटाने और शरीर को ताकत देने में भी सहायक मानी जाती है।
- इसका पानी वाला अर्क चबराहत कम करता है, और बुखार में राहत देता है।
- इसके अर्क में कैसर रोधी गुण भी पाए गए हैं।
- यह बूटी शरीर में सूजन और दर्द पैदा करने वाले रसायनों (प्रोस्टाग्लैंडिन) को भी कम करती है।

गोखरू/कंटीली: ये एक छोटी झाड़ीदार बूटी है, जो सूखे इलाके, खेत-खलिहान, रास्तों के किनारे और बंजर जमीन में उगती है। इसके फल



काटेदार होते है ।

औषधीय उपयोग:

- इस बूटी में खास तरह के सैपोनिन रसायन पाए जाते हैं, जो शरीर में हार्मोन को संतुलित करने में मदद कर सकते हैं तथा इस बूटी का इस्तेमाल शारीरिक ताकत बढ़ाने, मन को प्रसन्न रखने किया जाता है।
- नपुंसकता, बांझपन, मासिक धर्म की अनियमितता और रजोनिवृत्ति (मेनोपॉज) की तकलीफों में उपयोग किया जाता है।
- पेशाब की जलन, गुदों की पथरी, उच्च रक्तचाप (ब्लड प्रेशर), छाती का दर्द, कोलेस्ट्रॉल, पेट के रोग और पित्त (लीवर) की बीमारी में भी फायदेमंद माना जाता है।
- खिलाड़ी और व्यायाम करने वाले लोग भी इसे ताकत बढ़ाने के लिए इस्तेमाल करते हैं।

सांठ: यह एक साल भर में उगने वाली बूटी (वार्षिक पौधा) है। इसकी बेल जैसी डालियाँ जमीन पर फैली रहती हैं और लगभग 1 मीटर लंबी हो सकती हैं। पौधा हरे से लाल रंग का होता है। इसकी डालियों पर बाल नहीं होंगे, बस पत्तियों के पास हल्की सी रेखा जैसी झिल्लीदार बाल होते हैं। इसकी डालियाँ और पत्ते थोड़े गूदेदार (मांसल) होते हैं । सांठ एक जड़ी-बूटी है, जो आयुर्वेदिक दवाओं में उपयोग होती है।

औषधीय गुण:

- दर्द निवारक
- पेट की बीमारी और कब्ज
- खून कीबीमारीऔरखून कीकमी (एनीमिया)
- सूजन और रात को दिखाई न देना (रतौंधी) में काम आती है।

रजन: यह एक हरी पत्तेदार सब्जी है, जिसे अफ्रीका और अरब देशों में चिपचिपा सूप बनाकर खाया जाता है। हमारे यहाँ इसकी सब्जी बनाकर खायी जाती है तथा सुकमाणि भी की जाती है।

- इसमें कैल्शियम और आयरन जैसे खनिज



प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं इसलिए यह हड्डियों को मजबूत करने व खून बढ़ाने में सहायक होता है।

- विटामिन B1, B2, फोलिक एसिड, C और E भी इसमें पाए जाते हैं।

औषधीय गुण:

- शुगर (मधुमेह), सूजन और दर्द, खून की चर्बी (कोलेस्ट्रॉल), कैसर रोकने का करती है ।
- एंटीऑक्सीडेंट से भरपूर
- लीवर को मजबूत करने
- शरीर की रोग प्रतिरोधक शक्ति बढ़ाने
- हृदय रोगियों के लिए उपयोगी माना जाता है।

इस परिस्थिति में परंपरागत कृषि पद्धति का पुनः प्रचलन और सामूहिक श्रम व्यवस्था को पुनर्जीवित करना समय की आवश्यकता है।

इसके लिए खरीफ सीजन में:

- ‘सामूहिक निराई’ या ‘हलमा’ का आयोजन करें।
- निराई-गुड़ाई के दौरान उपयोगी वनस्पतियों (भाजी, औषधीय पौधे) को सुरक्षित रखें तथा उसे सुखाकर घर में भंडारण करें।
- निकाली गई घास को खेत की मेड़ पर या खाद के रूप में प्रयोग करें।
- खेतों में रासायनिक खरपतवारनाशक का उपयोग पूरी तरह बंद करें।
- खरपतवार नियंत्रणऐसी विधियों व तकनीकों द्वारा करें जिससे पर्यावरण पर कोई बुरा प्रभाव न हो।
- निराई के दौरान मिट्टी को मुलायम कर वर्षा जल को सोखने योग्य बनाएं।

इन उपायों से न केवल खरपतवार नियंत्रण होगा, बल्कि मिट्टी की उर्वरता, जल संरक्षण, जैव विविधता और सामूहिकता की परंपरा भी बनी रहेगी।

परंपरागत निराई-गुड़ाई व्यवस्था के पुनः अपनाने से कई सकारात्मक प्रभाव सामने आएंगे:

- खेतों में खरपतवार नियंत्रित रहेगा और फसलों की वृद्धि बेहतर होगी।
- रासायनिक दवाओं का उपयोग घटने से मिट्टी की उर्वरता और सूक्ष्म जीवों कि संख्या में वृद्धि होगी।
- खेत में परागण कीटों व उपयोगी जैव विविधता का संरक्षण होगा।
- खरपतवार से निकली घास से जैविक खाद व मल्लिगं कर जल संरक्षण संभव होगा।
- सामूहिक निराई-गुड़ाई से ग्रामीण सामूहिकता, पारंपरिक ज्ञान और कृषि संस्कृति का संरक्षण होगा।

इससे खेती की लागत घटेगी, उत्पादन बढ़ेगा और परम्परागत कृषि व्यवस्था पुनः मजबूत होगी। वागड़ क्षेत्र में खरीफ खेती के टिकाऊ प्रबंधन के लिए परंपरागत कृषि पद्धति का संरक्षण और प्रचार न केवल कृषि उत्पादन बल्कि जैव विविधता, मृदा-जल संरक्षण और ग्रामीण सामाजिक सहयोग को पुनर्जीवित करने का सशक्त माध्यम है।

इस खरीफ में हम सभी मिलकर अपने खेतों में परंपरागत कृषि पद्धतियों को अपनाएँ और टिकाऊ खेती की दिशा में एक मजबूत कदम बढ़ाएँ।
जहां किसान री खेती बचे, त्‍यां अन्न औ हरियाळी सजे !

बरसात में पशुधन प्रबंधन: आदिवासी संदर्भ में परम्परागत देवभाल और सतर्कता

बरसात का मौसम प्रकृति की संजीवनी है – पेड़ों की हरियाली, बहती नदियाँ, और झरनों का कलकल... लेकिन यही मौसम आदिवासी समुदायों के पशुपालन जीवन के लिए कई बार संकट का कारण बन जाता है। भीगे हुए बाड़े, कीचड़ भरे रास्ते, चारे की अनिश्चितता और बीमारियों का खतरा... ये सब कुछ बरसात में पशुधन को घेर लेते हैं। ऐसे में आदिवासी समुदाय का अनुभव, परंपरा और प्रकृति के साथ उसका सहजीवन इस मौसम को भी अवसर में बदलने का हुनर रखता है।

आदिवासी समुदायों के जीवन में पशुधन (गाय, बैल, बकरी, भैंस, मुर्गी आदि) न केवल आजीविका का आधार हैं, बल्कि यह संस्कृति, परंपरा और आत्मनिर्भरता का भी प्रतीक हैं। बारिश का मौसम इन पशुओं के लिए चुनौतीपूर्ण होता है, खासकर तब जब संसाधन सीमित हों और खेतों में कीचड़, बीमारी और चारे की कमी की हो। इस समय पारंपरिक ज्ञान और स्थानीय उपायों के साथ पशुओं की देखभाल से न केवल बीमारियों से बचाव संभव है, बल्कि उनकी उत्पादन क्षमता भी सुरक्षित रखी जा सकती है।

पशु आवास का प्रबंधन :-

आदिवासी क्षेत्रों में पशु अक्सर मिट्टी या लकड़ी से बने खुले शेड या झोंपड़ी में रहते हैं, इन्हें ऊँचाई पर बनाए ताकि बारिश का पानी अंदर नही जा सके । छप्पर या प्लास्टिक की टॉली से बरसात के समय छत को टपकने से बचाएं।

- घर के फर्श पर राख, सूखा पत्ता, भूसा या लकड़ी का बुरादा बिछाएं, जिससे नमी कम हो और फर्श गीला न रहे।
- पशुओ के बाड़े में हवादार खिड़की या रोशनदान बनाए रखें, ताकि बदबू और संक्रमण न फैले।
- नीम की पत्तियां, फिटकरी, राख या गोमूत्र से पशुओ के बाड़े की सफाई करना आदिवासी

पारंपरिक तरीका है- इसे अपनाएं।

- गोबर और मूत्र को रोज साफ कर खेत के लिए खाद या बायोगैस के लिए उपयोग करें।

पशु स्वास्थ्य एवं परम्परागत उपचार :-

- आदिवासी समुदायों में हल्दी, नीम, अजवाइन, लहसुन, गुड़, सरसों तेल, तुलसी जैसे औषधीय तत्वों का उपयोग होता रहा है:
- नीम पत्तों का उबला पानी** त्वचा संक्रमण और घाव में उपयोग करें।
- हल्दी और सरसों तेल का लेप** चोट व सूजन में लगाएं।
- अजवाइन+मेथी+लहसुन** मिलाकर गैस, अफारा में दें।
- गर्म पानी में हल्दी डालकर पशु को नहलाना खाज, खुजली, घाव और गंध से बचाव करता है।
- पैरों की कीचड़ से सफाई बहुत जरूरी है, वरना खुरपका-मुंहपका जैसे रोग हो सकते हैं।
- किसी भी रोग के लक्षण दिखें तो गांव के अनुभवी गुणी, वैद्य या नजदीकी पशु चिकित्सक से सलाह लें।

चारा और पानी की पारंपरिक व्यवस्था :-

- बारिश में चराई की जगह घर पर चारा देना अधिक सुरक्षित होता है।
- हरे चारे को सूखा कर देना – कच्चा या सड़ा चारा दस्त और बीमारी पैदा करता है।
- सूखा चारा जैसे भूसा, टांट, महुआ पत्ती, सूखे पत्ते, ज्वार-बाजरे का टूट आदि सुरक्षित होते हैं।
- पानी साफ हो, जहां संभव हो उबालकर दें या तांबे के घड़े में रखें जिससे पानी शुद्ध रहे।
- चराई से पहले थोड़ा सूखा चारा देना चाहिए – इससे पेट की गड़बड़ी नहीं होती। कृमिनाशन और बाहरी परजीवी नियंत्रण :-
- बारिश में गीलेपन और गंदगी से कीड़े, किलनी, पिस्सू, जुं आदि बढ़ते हैं।

रोकथाम के लिए:

- राख छिड़कें, नीम का धुआं करें, या सरसों तेल में कपूर मिलाकर रगड़ें।
- हर 3-4 महीने में कृमिनाशक दवा दें – सरकारी पशु स्वास्थ्य केंद्र से सलाह लें।

बच्चों और प्रजनन वाले पशुओं की देखभाल :-

- नवजात बछड़ा/बकरी के बच्चे बारिश में कमजोर हो सकते हैं — उन्हें सूखे और गर्म स्थान पर रखें।
- पशुओं के बच्चों को माँ का पहला गाढ़ा दूध (कोलेस्ट्रम) समय पर पिलाना जरूरी है, यह बीमारी से बचाव करता है।
- पशुओं के बच्चों को दस्त, निमोनिया से बचाने के लिए गर्म दूध, हल्दी दूध, या गुड़-नमक का पानी परंपरागत रूप से दिया जाता है।

आदिवासी अनुभव के आधार पर अतिरिक्त सुझाव :-

- गांवों में अक्सर बिजली गिरने की घटनाएं होती हैं – पशु बाड़े को लोहे के खंभे या छर्रों से दूर रखें, और पेड़ के नीचे न बांधें।
- छोटे बच्चों और कमजोर पशुओं को खुले खेत या जंगल में चरने न भेजें।
- सामुदायिक जगह / चरागाह को साफ-सुथरा रखें, जिससे सभी पशुपालकों को लाभ मिले।
- बरसात में पशुपालन की प्रमुख चुनौतियाँ**
- बाड़ों में पानी भरना और कीचड़ जमा होना
- इससे खुर की बीमारियाँ, फंगल इंफेक्शन और चोट लगने की आशंका बढ़ती है।
- बीमारियों का प्रकोप
- गलाघोंटू, खुरपका-मुंहपका, निमोनिया और डायरिया जैसे रोग तेजी से फैलते हैं।
- चारे की अनुपलब्धता
- बरसात के शुरुआती महीनों में खेतों में काम बंद होता है और

सूखा चारा भी सड़ सकता है।

- ग्रह-नक्षत्र और अंधविश्वास
- कई बार बीमारियों को 'देव का कोप' समझकर इलाज टाल दिया जाता है।



निष्कर्ष : बारिश का मौसम आदिवासी पशुपालकों के लिए संकट के साथ अवसर भी है। स्थानीय संसाधनों, पारंपरिक ज्ञान, और साझा सहयोग से पशुओं की अच्छी देखभाल संभव है। यह न केवल परिवार की आमदनी को बनाए रखता है, बल्कि आत्मनिर्भर ग्राम व्यवस्था और खाद्य सुरक्षा का भी



बच्चों की शिक्षा और सुरक्षा में ग्राम स्वराज समुह एवं परिजनों की भूमिका

पृष्ठभूमि-

दक्षिणी राजस्थान, मध्य प्रदेश और गुजरात आदिवासी क्षेत्र से सटे हुए गाँवों में बच्चों की शिक्षा और सुरक्षा पर ध्यान दिया जाना अत्यंत आवश्यक है। स्वराज की संकल्पना के साथ बाल स्वराज की परिकल्पना में परिवार और ग्राम स्तर पर समुदाय की भूमिका को समझे जाने से बच्चों की शिक्षा और सुरक्षा को सुनिश्चित किया जा सकेगा। एकजुट होकर जब समुदाय, ग्रामीण और परिवारजन संगठित होंगे तो बाल स्वराज को सुनिश्चित किये जाने के क्रम में वातावरण को प्रभावी बनाया जा सकेगा और बाल अधिकारों के साथ बच्चे अपने जीवन में सुरक्षित तरीके से शिक्षा को प्राप्त करके एक गौरवपूर्ण जीवन का नेतृत्व करने की दिशा में अग्रसित हो सकेंगे।

माता-पिता और परिवार की भूमिका-

आदिवासी क्षेत्र में बच्चों की सुरक्षा और शिक्षा से जुड़ाव करने में सबकी साझी जिम्मेदारी है। माता-पिता की पहली और महत्वपूर्ण भूमिका को इस प्रकार से समझा जा सकता है-



बच्चों को बाल श्रम से नहीं बल्कि शिक्षा से जोड़ें।

- समय-समय पर गाँव के विद्यालय में जाए अपने बच्चे को लेकर शिक्षकों के साथ बातचीत करे और बच्चे के विद्यालय में प्रदर्शन, जुड़ाव और अन्य चीजों को लेकर शिक्षकों के साथ संवाद करें। विद्यालय प्रबन्धन समिति के सदस्यों से मिलकर अपने बच्चों की शिक्षा से जुड़ी आवश्यकताओं पर बात करें और मिलकर समाधान करें।
- अपने बच्चों के साथ नियमित रूप से लम्बी बातचीत करे, बच्चों की कही बातों पर भरोसा करें और बच्चों को बोलने के लिए प्रोत्सहित करे।
- किसी अनजान के साथ, बच्चे को रुकने के लिए बाध्य ना करें अगर बच्चा किसी रिश्तेदार के साथ भी रुकने के लिए मना करे, परिवार को बच्चे की इस बात का सम्मान किया जाना चाहिए।
- यौन हिंसा क्या है, कैसे होती है इसके बारे में बच्चों (लड़का और लडकी) के साथ विस्तार से बातचीत करें अगर किसी बच्चे के साथ इस तरह की कोई घटना हो गयी है तो बिना डरे, बिना छुपाये उचित कार्यवाही करते हुए तुरंत पुलिस और कानून की मदद लेना तय करें।

शिक्षा के लिए माता-पिता की जिम्मेदारी-

- बच्चों के लिए परीक्षा को हौवा ना बनायें। अगर बच्चा परीक्षा को लेकर दबाव महसूस करता है तो बच्चे को इस दबाव से बाहर निकालने में सहयोग करें। हर वक़्त पढाई और परीक्षा को लेकर ही बातचीत बच्चों के साथ ना करते रहें बच्चों के साथ सहज व्यवहार बनायें।
- सुनिश्चित करें कि बच्चे ठीक से नियमित और 8-10 घंटे की

नींद लें। क्योंकि नींद लेना शारीरिक, मानसिक और बौद्धिक स्तर के लिए बहुत जरूरी है।

- अगर बच्चों में कुछ व्यवहारात्मक बदलाव देखते हैं तो उसे समझने का प्रयास करें। बच्चों को डांटने, फटकारने या पिटाई की बजाय उसके इस बदलाव की वजह को समझें और इन कारणों को लेकर काम करें ताकि बच्चों को जरूरी मदद मिल सके।
- अगर परीक्षा को लेकर बच्चे की ठीक से तैयारी नहीं है तो भी उस पर किसी तरह का दबाव बनाने की बजाय उसका मनोबल बढ़ाएं और बच्चे को यह समझाने का प्रयास करें कि आपको जितना आता है उसी के आधार पर परीक्षा दें परेशान होने से आप वो भी नहीं कर सकोगे जो आप जानते हैं।

समुदाय की भूमिका

बुजुर्गों का सानिध्य और बच्चों का विकास

बच्चों के विकास में परिवार और समुदाय के बुजुर्गों की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है, गाँव के बुजुर्गों के संगठन बने और माह में 2-3 बार बुजुर्गों के साथ संवाद का आयोजन किया जाए। इस दौरान गाँव के सभी बच्चों और बुजुर्गों को एक साथ बैठकर बातें करने के अवसर हों, बुजुर्ग अपने बचपन की बातें बताएं, कहानियाँ सुनाएँ। अपने समय में की जाने वाली खेती से जुड़ी बातों को लेकर अपने अनुभव शेयर करें, बुजुर्ग द्वारा अपने बचपन में जो खेल -खेले जाते थे वे खेल बच्चों को खेलना सिखाएं।

बच्चों के साथ वार्तालाप करें, बच्चों की चुनौतियों को समझें और उनके समाधान निकालने में सहयोग करें।

लोकगीत संगीत कार्यक्रम, नुककड़ नाटक, लोक नृत्य का आयोजन, लोक साहित्य, कवि सम्मेलन, कठपुतली के आयोजन पर आधारित सांस्कृतिक संंध्याओं का आयोजन करना, और सांस्कृतिक संंध्या के माध्यम से गाँव के बुजुर्गों, महिलाओं, बच्चों को एक साझे मंच पर लाना और पारम्परिक प्रथाओं, लोक गीतों और कहानियों के माध्यम से आपसी वार्तालाप का आयोजन करवाना आदि हो सकते हैं। सांस्कृतिक संंध्याओं के आयोजन का उद्देश्य साम्प्रदायिक सामंजस्य, सद्भावनापूर्ण और शांति का प्रसार करना होता है ताकि गाँव स्तर पर एक स्वस्थ माहौल और एक दूसरे के प्रति मान सम्मान की भावना बनी रह सके। बुजुर्ग महिलाओं और युवतियों के सानिध्य में गाँव की बालिकाओं के साथ संवाद स्थापित किये जाएँ। सुरक्षा से सम्बन्धित संवाद स्थापित किये जाने से बालिकाओं को नये अनुभव मिलेंगे। किशोरावस्था जैसे संवेदनशील दौर में बालिकाओं के दोस्त और सहयोगी बनकर उनकी सुरक्षा को सुनिश्चित करने और दिशाहीन होने से बचा जा सकेँ।

युवाओं की भागीदारी-

गाँव में बच्चों की शिक्षा और सुरक्षा को सुनिश्चित करने में वहां के युवाओं की बड़ी भागीदारी हो सकती है। अपने गाँव में स्वयं सेवक के रूप में अपनी भूमिका को समझें और बाल मैत्री पूर्ण गाँव की संकल्पना को साकर करें। निम्न लिखित बिन्दुओं को ध्यान में रखकर भूमिका को समझा जा सकता है।

गाँव के सार्वजनिक स्थलों को बाल केन्द्रित बनाने के रूप में बड़ी भूमिका-

गाँव के सार्वजनिक स्थलों पर खुले आम झुण्ड में बैठकर लोग ऐसे ही समय बबाद कर रहे होते हैं। ऐसे लोगों से संकोच करते गाँव के बच्चे और बालिकाएं वहां पर आने में या वहां से गुजरने में संकोच और असुरक्षित महसूस करते हैं और सहम जाते हैं और इसी वजह

से वे लोग खुलकर खेल -कूद और घूमना फिरना नहीं कर पाते। ऐसे सार्वजनिक स्थल पर बिजली होना सुनिश्चित करवाएं ताकि रात्रि के समय बच्चों, महिलाओं और बुजुर्गों को निकलने में असुविधा और असुरक्षा की भावना का अहसास ना हो। गाँव की युवा शक्ति मिलकर इन सार्वजनिक स्थलों को बाल केन्द्रित बनाने में भूमिका निभायें।

गाँवों में बच्चों के लिए सुरक्षा की दृष्टि से स्वस्थ माहौल के निर्माण में **आवश्यक भागीदारी-**

जिन गाँवों में पलायन की स्थिति बनती है और परिवारों में पुरुष सदस्य जीविकोपार्जन संसाधन जुटाने के क्रम में गाँव से बाहर चले जाते हैं ऐसे परिवारों में पीछे महिलाएं और बच्चों को अकेले ही रहकर अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति स्वयं करनी होती है। इन परिवारों की आपातकालीन स्थितियों या आवश्यकतानुसार सहयोग प्रदान कर सकेँ। परिवारों को सहयोग मिलेगा और जीवन के संघर्ष को आसान बनाया जा सकता है।

शैक्षणिक गतिविधियों का आयोजन करना-

गाँव में पढ़े-लिखे युवक और युवतियां मिलकर किसी एक स्थान पर गाँव के बच्चों को एकत्रित करें और उनको पढ़ने -लिखने में आ रही बाधाओं को दूर करने में सहयोग करें। ऐसे बच्चों की पहचान करना जो शिक्षा से वंचित हैं या वंचित होने की संभावना के साथ हैं और उनकी पहचान करना और शिक्षा से जोड़ना।

पंचायत स्तर पर कार्यान्वित खेलकूद समिति का गठन-

खेलों में जन सहभागिता तय करने और बढ़ाने के उद्देश्य से यह आवश्यक हो जाता है कि ग्रामीण स्तर पर युवाओं की सक्रिय भागीदारी को सुनिश्चित किया जाए और निरंतर रूप से खेल- कूद गतिविधियों का आयोजन करवाया जाए ताकि गाँव और पंचायत स्तर से प्रतिभावन युवा निकलकर आगे जिला, राज्य और राष्ट्र स्तर पर अपनी योग्यता को दर्ज करवा सके।

विद्यालयों और आंगनवाड़ी सेवाओं की पहुँच तक का सुगम और बाधा रहित रास्ता-

गाँवों में खेत, खलिहान और कच्चे रास्तों व पग डंडियों के कारण विद्यालयों तक पहुँच पाना मुश्किल हो जाता है। बहुत बार ऐसा भी देखा गया है कि जिन राहों से गुजर कर बच्चे और खासकर बालिकाएं विद्यालय आया जाया करते हैं वे खेतों में से होकर गुजरते हैं जबकि कि ऊँची-ऊँची फसलें उन रास्तों को रोक देती हैं और ऐसे में बालिकाओं में असुरक्षा की भावना उनको विद्यालय जाने से रोक देती हैं ऐसी चीजों से बचाव में गाँव के युवा मिलकर विद्यालयों और आंगनवाड़ी को गाँव से जोड़ने के लिए सड़क निर्माण में अपनी भागीदारी सुनिश्चित करें तो गाँव के बच्चे, महिलाओं को शिक्षा और स्वास्थ्य की सुविधा से जुड़ाव सुनिश्चित करने में एक बड़ा सहयोग प्राप्त किया जा सकता है।

PLCPC में अपने गाँव के सदस्यों के साथ नियमित वार्तालाप करना, उनकी बैठकों में भाग लेना, अपने गाँव के बच्चों से जुड़ी चीजों को रखना और बाल सुरक्षा को सुनिश्चित करना।

VHSNC के सदस्यों का पता लगाना, नियमित बैठकों में शामिल होना, क्षेत्र के बच्चों से जुड़ी चीजों की चर्चा करना और गाँव के बच्चों का स्वास्थ्य, पोषण और सफाई को सुनिश्चित करना।

SMC के सदस्यों से नियमित रूप से मेल जोल बढ़ाना , उनके साथ गाँव के बच्चों की शिक्षा से जुड़ी चीजों के लिए विद्यालय देख-रेख, बच्चों की शिक्षा का जायजा लेना, शिक्षकों की कमी, विद्यालय की आधारभूत संरचना जैसे-चारदीवारी, कक्षा-कक्ष, पर्याप्त संख्या में शिक्षक, पीने के पानी और शौचालय की व्यवस्था, मध्यान्न भोजन,

वर्षा ऋतु में परम्परागत ज्ञान और पौषण में परम्पराओं का महत्व

आदिवासी समुदायों का जीवन प्रकृति की लय और ऋतुओं के बदलाव के साथ गहराई से जुड़ा हुआ है। इन समुदायों की जीवनशैली, आजीविका, पर्व-त्योहार और खानपान कुछ न कुछ रूप में मौसम और पर्यावरण से प्रभावित होते हैं। वर्षा ऋतु का आगमन जहाँ खेतों में हरियाली, मिट्टी की खुशबू और कृषि की नई आशाओं को लेकर आता है, वहीं यह अनेक स्वास्थ्य संबंधी चुनौतियाँ भी साथ लाता है। इस मौसम में वातावरण में नमी बढ़ जाती है, जलभराव होता है, जिससे मच्छर और जीवाणु पनपने लगते हैं। परिणामस्वरूप मलेरिया, डेंगू, वायरल बुखार, खांसी-जुकाम, दस्त और त्वचा संबंधी रोग जैसी बीमारियाँ ग्रामीण और वन के आस-पास के क्षेत्रों में तेजी से फैलती हैं।

समुदाय इन स्वास्थ्य चुनौतियों से निपटने में एक अनूठी समझ और परंपरागत समाधान अपनाते आए हैं। पीढ़ियों से चली आ रही खानपान की परंपराएँ केवल स्वाद और भूख मिटाने का माध्यम नहीं हैं, बल्कि यह मौसमी बीमारियों से रक्षा करने वाले प्राचीन उपाय भी हैं। हमारे समुदायों ने मौसम के अनुरूप ऐसी खाद्य परंपराएँ विकसित की हैं, जिनमें शरीर को गर्म रखने, पाचन शक्ति को बनाए रखने और रोग प्रतिक्राा तंत्र को सक्रिय रखने की अद्भुत क्षमता है।

प्रकृति से सीखा गया यह ज्ञान न तो किसी औषधालय में लिखा है, न ही किसी पाठ्यक्रम में पढ़ाया जाता है, लेकिन यह जीवन के अनुभव और सामूहिक चेतना से उपजा है। वर्षा ऋतु में उपयोग किए जाने वाले पारंपरिक आहार—जैसे कंद-मूल, मोटे अनाज, औषधीय वनस्पतियाँ और स्थानीय परम्परागत सब्जियाँ आज भी आदिवासी जीवनशैली का अभिन्न हिस्सा हैं। यही परंपराएँ उन्हें मानसून की बीमारियों से लड़ने की शक्ति देती हैं और आधुनिक औषधियों पर निर्भरता को कम करती हैं।

परंपरागत खानपान

आदिवासी समुदायों का खानपान महज भोजन की व्यवस्था नहीं, बल्कि प्रकृति के साथ समन्वय और पीढ़ियों से संचित पारंपरिक ज्ञान का जीवंत उदाहरण है। इनका आहार ऋतु की प्रकृति, स्थानीय संसाधनों की उपलब्धता और शरीर की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए विकसित हुआ है। विशेषकर वर्षा ऋतु में जब वातावरण में नमी, संक्रमण और मौसमी बीमारियों का खतरा अधिक होता है, तब यह खानपान शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता को सुदृढ़ करने में निर्णायक भूमिका निभाता है।

कंद-मूल और पारंपरिक वनसब्जियाँ, जैसे पुवाड, रतालू कंद,



डिमडी, लूणिया, कंद गोला, बांस, जेडा (कमल की जड़े), रजन, कूण, बोखला (बोकना), साटा (ब्लैक पिग्गविड), किकोडा, नाली साग, काचरी और पापड़ी आदि इस मौसम में जंगलों और आसपास के प्राकृतिक क्षेत्रों से प्राप्त की जाती हैं। ये वनस्पतियाँ फाइबर, लौह तत्व (आयरन) और प्राकृतिक एंटीऑक्सीडेंट से भरपूर होती हैं, जो पाचन को बेहतर बनाने के साथ-साथ शरीर की भीतर से सफाई करती हैं और रोगों से लड़ने की क्षमता बढ़ाती हैं। लोकी, तुराई, लाल भिन्डी, ग्वार, देशी टमाटर और देशी भिंडी जैसी हरी सब्जियाँ इस मौसम में आदिवासी थाली का अभिन्न हिस्सा होती हैं। इनकी तासीर हल्की होती है, जिससे ये पेट को आराम देती हैं और अपच या गैस जैसी समस्याओं से बचाव करती हैं।

मोटे अनाज, जैसे मक्का, कोदरा, रागी, बट्टी, काली कामोद धान), पाथरिया (धान) और कुरी को वर्षा ऋतु में विशेष रूप से प्राथमिकता दी जाती है। यह अनाज न केवल पोषण से भरपूर होते हैं, बल्कि इनकी गर्म तासीर शरीर को मानसून की ठंडक और संक्रमण से सुरक्षित रखती है। ये धीमी गति से पचते हैं, जिससे लंबे समय तक ऊर्जा मिलती है और भूख की बार-बार आवश्यकता नहीं पड़ती।

खाद्य वसा के स्रोत भी परंपरागत रूप से चुने गए हैं- जैसे देसी धी, महुआ का तेल और सरसों का तेल। ये न केवल भोजन को स्वादिष्ट बनाते हैं, बल्कि शरीर में गर्मी बनाए रखने, आंतरिक अंगों की सुरक्षा करने और पोषक तत्वों के अवशोषण को बेहतर बनाने में मदद करते हैं।

दालों की विविधता-जैसे चना, तुअर, मूंग, उड़द और चवला-आदिवासी आहार का आवश्यक अंग है। वर्षा ऋतु में इनका उपयोग खिचड़ी, सूप या पतले पकवानों के रूप में किया जाता है, जिससे यह सुपाच्य भी रहते हैं और शरीर को उच्च गुणवत्ता का प्रोटीन भी प्राप्त होता है।

रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने वाले परंपरागत उपाय

- परम्परागत काढ़ा और पेय - तुलसी, गिलोय, नीम, अदरक, काली मिर्च और शहद से बने काढ़े का सेवन बारिश में आम है। इससे सर्दी-खांसी, ज्वर और वायरल संक्रमण से बचाव होता है।
- भुनी हल्दी और दूध का सेवन - हल्दी में कर्कष्युमिन नामक तत्व होता है जो प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाता है और सर्दी-जुखाम होने से बचाता है।
- सत्तू और भुना चना - यह शरीर में ऊर्जा बनाए रखते हैं, पेट को हल्का रखते हैं और मौसम की मार से सुरक्षा देते हैं।
- नींबू और आंवला - विटामिन C से भरपूर यह खाद्य सामग्री मानसून में संक्रमण से रक्षा करती है।
- रोटी - मक्का, कोदरा, रागी, बट्टी, काली कामोद धान), पाथरिया (धान) और कुरी या बाजरे की
- मोटी रोटी - साथ लहसुन-हरी मिर्च का चटपटा चटनी, छाछ और दही, जो पाचन में सहायक होती है।
- राबड़ी या पतली खिचड़ी - बच्चों और बुजुर्गों के लिए पाचन में सहायक, हल्की लेकिन पोषण से भरपूर होती है।
- कोदरा और भात - यह बरसात के मौसम में मल्टिक को शांत करने और शरीर को रोगमुक्त बनाए रखने के लिए उपयुक्त हैं।

आदिवासी समुदायों का परम्परागत ज्ञान

यहां के आदिवासी समुदाय ऋतुओं के अनुरूप अपने जीवन की गति और भोजन दोनों को बदलना आवश्यक हैं। वर्षा ऋतु में

जब नमी बढ़ती है और पाचन क्षमता कम हो जाती है, तब ये हल्के, सुपाच्य और औषधीय गुणों से युक्त खाद्य पदार्थों का सेवन करते हैं। उदाहरण के लिए, मक्का की रोटी और छाछ, कोदो की खिचड़ी, कद्दू-तुराई जैसी सब्जियाँ तथा काढ़े का सेवन आम है। यह सब हमारी पारंपरिक जीवनशैली का हिस्सा है, जो न तो पुस्तकों में पढ़ा गया है, न आधुनिक विज्ञान द्वारा सिखाया गया है, बल्कि अनुभव और प्रकृति के साथ जुड़ाव से उपजा है। हमें निरंतर हमारे जीवन में इनका उपयोग जारी रख, साथ ही इनके फायदे बच्चों और युवाओ को बताए ताकि यह कई हमारे जीवन से दूर न हो।

पारंपरिक बीमारियों की पहचान और जड़ी-बूटी उपचार - हमारे क्षेत्र के जंगलों और पौषण बाड़ी (पारंपरिक घरेलू बगीचों) में पाई जाने वाली सैकड़ों जड़ी-बूटियों को समुदाय पहचानता है और उनकी औषधीय विशेषताओं का उपयोग करता है। तुलसी, गिलोय, अदरक, काली मिर्च, नवली (एक स्थानीय कंद), नीम, धतूरा, बादल रोग जड़ी, बिच्छू बूटी और लूणी जैसे पौधों का उपयोग बुखार, पेट दर्द, सर्दी-खांसी, दस्त और अन्य मौसमी रोगों के लिए किया जाता है, इन्हें समुदाय पारंपरिक उपचार विधियाँ धीरे-धीरे भूलता जा रहा है, अब समय है इन्हें पुन हमारे जीवन का हिस्सा बनाए ताकि आर्थिक बचत का रास्ता हमारे लिए खुल जाये।

- गिलोय और तुलसी का काढ़ा बुखार और वायरल संक्रमण में।
- धतूरा और नीम की पत्तियों का धुआँ मच्छरों को भगाने और वातावरण की शुद्धि में।
- अदरक-लहसुन, महुआ, चना और गुड़ का मिश्रण शरीर में गर्मी बनाए रखने और खांसी-जुकाम में उपयोगी।

सामूहिक रसोई और देखभाल की संस्कृति - आदिवासी समाजों में संकट का समय केवल व्यक्तिगत नहीं होता; वह पूरे समुदाय का होता है। विशेषकर वर्षा ऋतु में, जब बीमारियाँ फैलने लगती हैं या परिवार आर्थिक तंगी में होता है, तब समुदाय एकजुट होकर “सामूहिक रसोई” या “सांझी रसोई” की परंपरा निभाता है। कई गाँवों में महिलाएँ मिलकर भोजन बनाती हैं और जरूरतमंद परिवारों के लिए भोजन उपलब्ध कराती हैं। साथ ही जहाँ किसी की बीमारी, मृत्यु या संकट की घड़ी में घर-घर से आटा, सब्जी, नमक और धी इकट्ठा कर भोजन तैयार किया जाता है और पूरे मोहल्ले में बाँटा जाता है। इससे न केवल पोषण सुनिश्चित होता है, बल्कि सामाजिक भावनाएँ और सामूहिकता भी सशक्त होती थी। लेकिन वर्तमान में यह कई देखने को नहीं मिलता है, हमारे पास अभी समय है, इन्हें वापस समुदाय और परिवार का हिस्सा बनाए ताकि हमारी संस्कृति, परम्परा जीवित रह सके।

ज्ञान का मौखिक हस्तांतरण - इस क्षेत्र में परंपरागत ज्ञान का संग्रहण लेखन के बजाय अनुभव और संवाद के माध्यम से होता आया है। वृद्ध महिलाएँ—जिन्हें गाँव में ‘दाय’ या ‘जड़ी बूटी वाली मां’ कहा जाता है—बच्चों और युवाओं को खेतों, जंगलों और रसोई के जरिए यह ज्ञान हस्तांतरित करती हैं। अब युवाओ बच्चों की इन माताओं दे दूरियाँ होती जा रही है, अब हमें इस ज्ञान और परम्परा को पुन: परिवार एवं समुदाय का हिस्सा बनाना है।

पोषक आहार परंपराएं और बच्चों का स्वास्थ्य

- माताओं द्वारा पारंपरिक पोषण देना** - गर्भवती और स्तनपान कराने वाली माताओं को ‘लडडू’, ‘मेथी, महुआ, गोंद, धनियाँ के लड्डू जैसे आयरन, कैल्शियम और ऊर्जा से भरपूर खाद्य पदार्थ हैं, अब इनके विकास में सहायक होते है इन्हें इस मौसम में अपनाते रहे।

बिजली की व्यवस्था आदि और बच्चों को आ रही समस्याओं पर बात करना और समाधान निकालने से जुड़े कार्य करते रहना।

पंचायत, ग्राम और विद्यालय स्तर पर गठित इन समितियों की बैठकों के दौरान, गाँव में समस्याओं से जूझ रहे बच्चों की चीजों को ग्राम सभा में प्रस्तुत किया जाए।

समुदाय की अन्य भूमिकाएं-

- गाँव में अगर किसी भी बच्चे के साथ हुई यौन हिंसा के बारे में पता जिन गाँवों में पलायन की स्थिति बनती है और परिवारों में पुरुष सदस्य जीविकोपार्जन संसाधन जुटाने के क्रम में गाँव से बाहर चले जाते हैं ऐसे परिवारों में पीछे महिलाएं और बच्चों को अकेले ही रहकर अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति स्वयं करनी होती है। इन परिवारों की आपातकालीन स्थितियों या आवश्यकतानुसार सहयोग प्रदान कर सकेँ। परिवारों को सहयोग मिलेगा और जीवन के संघर्ष को आसान बनाया जा सकता है।
- शैक्षणिक गतिविधियों का आयोजन करना-**
- गाँव में पढ़े-लिखे युवक और युवतियां मिलकर किसी एक स्थान पर गाँव के बच्चों को एकत्रित करें और उनको पढ़ने -लिखने में आ रही बाधाओं को दूर करने में सहयोग करें। ऐसे बच्चों की पहचान करना जो शिक्षा से वंचित हैं या वंचित होने की संभावना के साथ हैं और उनकी पहचान करना और शिक्षा से जोड़ना।
- पंचायत स्तर पर कार्यान्वित खेलकूद समिति का गठन-**
- खेलों में जन सहभागिता तय करने और बढ़ाने के उद्देश्य से यह आवश्यक हो जाता है कि ग्रामीण स्तर पर युवाओं की सक्रिय भागीदारी को सुनिश्चित किया जाए और निरंतर रूप से खेल- कूद गतिविधियों का आयोजन करवाया जाए ताकि गाँव और पंचायत स्तर से प्रतिभावन युवा निकलकर आगे जिला, राज्य और राष्ट्र स्तर पर अपनी योग्यता को दर्ज करवा सके।
- विद्यालयों और आंगनवाड़ी सेवाओं की पहुँच तक का सुगम और बाधा रहित रास्ता-**
- गाँवों में खेत, खलिहान और कच्चे रास्तों व पग डंडियों के कारण विद्यालयों तक पहुँच पाना मुश्किल हो जाता है। बहुत बार ऐसा भी देखा गया है कि जिन राहों से गुजर कर बच्चे और खासकर बालिकाएं विद्यालय आया जाया करते हैं वे खेतों में से होकर गुजरते हैं जबकि कि ऊँची-ऊँची फसलें उन रास्तों को रोक देती हैं और ऐसे में बालिकाओं में असुरक्षा की भावना उनको विद्यालय जाने से रोक देती हैं ऐसी चीजों से बचाव में गाँव के युवा मिलकर विद्यालयों और आंगनवाड़ी को गाँव से जोड़ने के लिए सड़क निर्माण में अपनी भागीदारी सुनिश्चित करें तो गाँव के बच्चे, महिलाओं को शिक्षा और स्वास्थ्य की सुविधा से जुड़ाव सुनिश्चित करने में एक बड़ा सहयोग प्राप्त किया जा सकता है।
- PLCPC में अपने गाँव के सदस्यों के साथ नियमित वार्तालाप करना, उनकी बैठकों में भाग लेना, अपने गाँव के बच्चों से जुड़ी चीजों को रखना और बाल सुरक्षा को सुनिश्चित करना।
- VHSNC के सदस्यों का पता लगाना, नियमित बैठकों में शामिल होना, क्षेत्र के बच्चों से जुड़ी चीजों की चर्चा करना और गाँव के बच्चों का स्वास्थ्य, पोषण और सफाई को सुनिश्चित करना।
- SMC के सदस्यों से नियमित रूप से मेल जोल बढ़ाना , उनके साथ गाँव के बच्चों की शिक्षा से जुड़ी चीजों के लिए विद्यालय देख-रेख, बच्चों की शिक्षा का जायजा लेना, शिक्षकों की कमी, विद्यालय की आधारभूत संरचना जैसे-चारदीवारी, कक्षा-कक्ष, पर्याप्त संख्या में शिक्षक, पीने के पानी और शौचालय की व्यवस्था, मध्यान्न भोजन,

सकारात्मक पहलें और नवाचार

- आदिवासी बालकों के लिए आश्रमशालाएं, लेकिन गुणवत्ता का संकट अब भी है।
- राजीव गांधी बालिका योजना, मॉडल रेंजिडेंशियल स्कूल जैसे प्रयास।
- वाग्धारा, संस्था ने बाल मंच, पंचायत में बाल मुद्दों को लाना शुरू किया।
- आवासीय स्कूल (जनजातीय बच्चों के लिए विशेष), लेकिन पहुंच सीमित।
- आंगनवाड़ी और शिक्षा के समन्वय पर सरकारी जोर।

निष्कर्ष
राजस्थान, गुजरात और मध्यप्रदेश में आदिवासी बच्चों की शिक्षा और सुरक्षा का सवाल केवल स्कूल या कानून का नहीं है, यह उनके जीवन अधिकार, संस्कृति की निरंतरता और भविष्य के आत्मनिर्भर समाज की नींव है। जब तक हम आदिवासी बच्चों को उनकी भाषा, संस्कृति और परिस्थितियों के अनुरूप शिक्षा और सुरक्षा नहीं देंगे, तब तक उनके साथ न्याय नहीं होगा। यह समय है जब सरकार, समाज और संगठन मिलकर इस दिशा में ठोस और संवेदनशील कदम उठाएं।

बच्चों के लिए निष्कर्ष

राजस्थान, गुजरात और मध्यप्रदेश में आदिवासी बच्चों की शिक्षा और सुरक्षा का सवाल केवल स्कूल या कानून का नहीं है, यह उनके जीवन अधिकार, संस्कृति की निरंतरता और भविष्य के आत्मनिर्भर समाज की नींव है। जब तक हम आदिवासी बच्चों को उनकी भाषा, संस्कृति और परिस्थितियों के अनुरूप शिक्षा और सुरक्षा नहीं देंगे, तब तक उनके साथ न्याय नहीं होगा। यह समय है जब सरकार, समाज और संगठन मिलकर इस दिशा में ठोस और संवेदनशील कदम उठाएं।

- बच्चों के लिए निम्न आहार** - ज्वार, कोदो, उड़द, मूंग, चना, मूंगफली, तिल और गुड़ से बना मिश्रण बच्चों की रोग प्रतिरोषक क्षमता को बढ़ाता है।
- वर्षा ऋतु में विशेष सावधानियाँ और परंपरागत उपचार**
- पानी को उबालकर पीने की परंपरा - संक्रमण से बचाव के लिए उबला पानी, नीम की डंडी डालकर रखने की पद्धति।
- सिर पर तेल लगाना और नहाना: सरसों के तेल से मालिश और स्नान (नीम-पत्तियों वाला पानी) शरीर को साफ और स्वस्थ रखता है।
- नंगे पांव चलने से बचना - कीड़े-मकोड़ों और संक्रमण से बचाव के लिए चप्पल या पैरों पर तेल लगाकर चलने की परंपरा।

परंपरागत खानपान और जलवायु परिवर्तन से अनुकूलन

जलवायु परिवर्तन से मानसून का स्वरूप बदल रहा है, लेकिन आदिवासी खानपान की लचीलापन इसे सहन करने में मदद करता है। पारंपरिक फसलें कम जल में उगती हैं, पोषण प्रदान करती हैं और वर्षा में आसानी से पचती हैं।

वर्तमान चुनौतियाँ और पारंपरिक ज्ञान की पुनर्स्थापना

- बाजार आधारित खानपान और ‘जंक फूड’ के बढ़ते प्रभाव ने पारंपरिक भोजन को पीछे कर दिया है।
- पारंपरिक ज्ञान पीढ़ियों में टूट रहा है, जिससे वर्षा ऋतु में बीमारियाँ बढ़ती जा रही हैं।
- युवा पीढ़ी को यह ज्ञान हस्तांतरित करना और स्कूलों, आंगनबाड़ियों में शामिल करना अनिवार्य है।

समाधान और समुदाय आधारित पहल

- ‘खानपान, पोषण एवं स्वास्थ्य स्वराज’ जैसे अभियानों/ पहलों को बढ़ावा देना।
- समुदाय स्तर संगठन बाल स्वराज, सक्षम समूह एवं ग्राम स्वराज समूह में पारंपरिक रसोई और खान-पान पर नियमित संवाद किया जाना चाहिए।
- स्थानीय बीजों, सब्जियों और खाद्य वनों का संरक्षण।
- परम्परागत औषधि आधारित ज्ञान को युवाओ के साथ साझा करना।

वर्षा ऋतु में रोगों से मुकाबले के लिए आदिवासी समुदायों का खानपान और परंपरागत ज्ञान अमूल्य है। यह न केवल रोग प्रतिरोधक क्षमता को मजबूत करता है, बल्कि समूचे जीवन दर्शन को प्राकृतिक लय में बनाए रखने में सहायक होता है। आवश्यकता है कि हम इस ज्ञान को फिर से स्वीकारें, आगे बढ़ाएँ और आने वाली पीढ़ियों को इसका महत्व समझाएँ।



कृषि एवं आदिवासी स्वराज संगठन सहयोग इकाई की गतिविधियां

“हार नहीं मानूंगी, ठहर नहीं जाऊंगी”

ग्रामीण भारत में जब किसी लड़की की शादी कम उम्र में हो जाती है, तो आम तौर पर उसकी शिक्षा, स्वतंत्रता और सपनों पर विराम लग जाता है। मगर कुछ लोग होते हैं जो इन रुकावटों को चुनौती देते हैं और न सिर्फ अपने जीवन की दिशा बदलते हैं बल्कि पूरे समाज के लिए एक नई राह बना देते हैं। ऐसी ही एक प्रेरणास्पद महिला हैं — कमला बेन। आज उन्हें राजस्थान के बांसवाड़ा जिले में घाटोल खंड के हनुमानपुरा गांव में सभी लोग “बीज माता” के नाम से जानते हैं।

कमला बेन की कहानी न केवल आत्मनिर्भरता की मिसाल है, बल्कि यह सामाजिक बदलाव, पारंपरिक ज्ञान और टिकाऊ विकास



के मूल्यों की एक गुंजती हुई आवाज है। यह कहानी हमें बताती है कि संसाधनों की कमी और सामाजिक सीमाओं के बीच भी यदि जज़्बा और समर्पण हो, तो बदलाव संभव है।

शुरुआती जीवन और चुनौतियाँ

कमला बेन का जन्म एक ग्रामीण परिवार में हुआ जहाँ परंपराएं और सामाजिक मान्यताएं लड़कियों के सपनों से बड़ी मानी जाती थीं। शिक्षा का महत्व बहुत सीमित था, खासकर बेटियों के लिए। केवल 13 वर्ष की आयु में उनका विवाह एक किसान परिवार में कर दिया गया। विवाह के बाद घरेलू जिम्मेदारियों और सामाजिक अपेक्षाओं ने शिक्षा के द्वार लगभग बंद कर दिए।

हालाँकि क्षम्त न के उन्हें एक ऐसा साथी दिया, जिसने उनकी क्षमता को पहचाना और प्रोत्साहित किया। उनके पति कांतिलाल मईड़ा ने हर मोड़ पर उनका समर्थन किया, और यही साथ उनके जीवन की दिशा को बदलने वाला साबित हुआ। पति-पत्नी ने साथ मिलकर खेती की जिम्मेदारियाँ संभालीं, कठिनाइयों का सामना किया, और समय-समय पर दिहाड़ी मजदूरी तक भी करनी पड़ी। लेकिन कमला बेन के भीतर हमेशा कुछ नया सीखने और समाज के लिए कुछ करने की ललक बनी रही।

सक्षम समूह से जुड़ाव और प्रेरणा का आरंभ

साल 2019 में, जब वाग्धारा संस्था ने हनुमानपुरा गांव में ‘सक्षम समूह’ की शुरुआत की, तब कमला बेन की जिज्ञासा ने उन्हें इस पहल से जोड़ दिया। इस समूह का उद्देश्य था — गांव को पारंपरिक खेती और स्वराज की ओर ले जाना। यह पहल बाजार-निर्भरता को कम करने और समुदाय के आत्मनिर्भर बनने की दिशा में एक मजबूत कदम थी।

कमला बेन ने इस मंच को एक अवसर की तरह लिया। उन्होंने खेती से जुड़े पारंपरिक तरीकों, बीजों के संरक्षण, खाद निर्माण, पशुपालन और मिट्टी की गुणवत्ता बनाए रखने जैसी चीजों पर गहरी समझ विकसित करनी शुरू की। वाग्धारा के सहयोग से उन्होंने कृषि को केवल जीविका नहीं, बल्कि एक आंदोलन के रूप में अपनाया।

कृषि में नवाचार: विविधता, देसी ज्ञान और जैविक बदलाव
हनुमानपुरा गांव में अधिकांश किसान पारंपरिक रूप से एक ही प्रकार की फसल उगाते थे, जिससे न केवल भूमि की उपजाऊता घट रही थी, बल्कि किसानों की आमदनी भी सीमित रह जाती थी।

कमला बेन ने इस परंपरा को चुनौती दी।

उन्होंने अपने छोटे से खेत में विविध फसलें उगाना शुरू किया — जैसे सब्जियाँ, अनाज, औषधीय पौधे और देसी बीजों की फसलें। उन्होंने रासायनिक खादों की जगह जैविक खाद जैसे गोबर, नीम,



और देसी सामग्री से बनी खाद का प्रयोग करना शुरू किया। उनकी मेहनत रंग लाई। जहाँ पहले वे केवल घरेलू उपयोग के लिए खेती करती थीं, अब वे हर महीने 6000 से अधिक की कमाई सब्जियों और अन्य उत्पादों से करने लगीं। उनकी खेती का मॉडल धीरे-धीरे गांव के अन्य किसानों के लिए भी उदाहरण बनने लगा।

बीजों की देवी – “बीज माता” की उपाधि

कमला बेन ने खेती की एक सबसे मूलभूत और उपेक्षित कड़ी को पहचाना — बीज संरक्षण। उन्हें यह समझ में आया कि अच्छे

और देसी बीजों की अनुपलब्धता गांव के किसानों की सबसे बड़ी समस्या थी। उन्होंने इस दिशा में ठोस काम शुरू किया।

उन्होंने देशी बीजों का संग्रह और संरक्षण करना शुरू किया। आज उनके पास 32 से अधिक देशी बीजों की किस्में हैं — जैसे बाजरा, ज्वार, उड़द, चना, मूंग, मक्का, कोदरा, लाल भिंडी, लौकी, करेले, ग्वारफली, मिर्च, टमाटर, मूंगफली, हल्दी, अदरक, लहसुन आदि। कमला बेन इन बीजों को न केवल खुद उगाती हैं, बल्कि उन्हें गांव के अन्य किसानों को नि:शुल्क या बेहद कम लागत पर भी उपलब्ध कराती हैं। आज गांव में जब भी किसी को बीजों की जरूरत होती है, तो पहला नाम लिया जाता है — कमला बेन का। यही कारण है कि उन्हें स्नेहपूर्वक अब “बीज माता” कहा जाता है।

पारंपरिक औषधीय ज्ञान का पुनरुद्धार

खेती के साथ-साथ कमला बेन ने पारंपरिक औषधीय ज्ञान को भी अपनाया और उसे पुनर्जीवित किया। उनके पति कांतिलाल ने अपनी दादी और माँ और पिता से आयुर्वेदिक जड़ी-बूटियों का ज्ञान प्राप्त किया था। इस जोड़ी ने उस ज्ञान को गांव की महिलाओं और बच्चों तक पहुंचाने का काम शुरू किया।

कमला बेन अब महिलाओं को यह सिखाती हैं कि कैसे तुलसी, गिलोय,नवली, नीम, सहजन, हल्दी,जैसी औषधियाँ साधारण बीमारियों में कारगर होती हैं। और आगे बताती हैं कि किस तरह घरेलू उपायों से दवाइयों पर निर्भरता कम की जा सकती है।

महिला सशक्तिकरण की नायिका

कमला बेन की सबसे बड़ी उपलब्धियों में से एक है — गांव की महिलाओं में आत्मविश्वास और नेतृत्व की भावना का संचार। उन्होंने 19 महिलाओं को साथ लेकर “सक्षम महिला समूह” का गठन किया। इस समूह की महिलाएं अब न केवल खेती में सहयोग करती हैं, बल्कि बीजों का संरक्षण, खाद निर्माण, घरेलू औषधियों



टोकरी, मिट्टी की कोठी या लकड़ी के मचान पर संरक्षित किया जाता है। यह संग्रहण बरसात बाद के महीनों में पशुओं के लिए एक सुरक्षित और पोषणयुक्त चारे का स्रोत बनता है। इसके साथ ही, घर के पास चारे की उपलब्धता महिलाओं की मेहनत को भी कम करती है। इन दोनों विधियों का मिलाजुला लाभ यह होता है कि एक ओर तो चारागाहों की दीर्घकालिक उत्पादकता बनी रहती है, और दूसरी ओर पशुओं के लिए मानसून बाद के महीनों में भी चारे की कमी नहीं होती। पशुओं का स्वास्थ्य बेहतर रहता है, दुग्ध उत्पादन में वृद्धि होती है और पशुधन पर आश्रित आजीविका सुरक्षित बनी रहती है।

बदलते मौसम और अनियंत्रित चराई जैसे: कारणों से पशुपालन संकट में है, ऐसे में इन परंपरागत तरीकों को फिर से अपनाना समय की मांग है। ये केवल पुराने अभ्यास नहीं, बल्कि आज के संदर्भ में भी पूर्णतः प्रासंगिक और प्रभावी समाधान हैं। समुदाय यदि इन विधियों को पुनः जागरूकता और सहभागिता के साथ अपनाए, तो पशुपालन एक बार फिर से आत्मनिर्भर, पर्यावरण-अनुकूल और टिकाऊ बन सकता है।

स्वास्थ्य और जल स्वच्छता संरक्षण

वर्षा ऋतु केवल खेतों और वनों के लिए ही नहीं, बल्कि मानव स्वास्थ्य के लिए भी एक निर्णायक समय होता है। यह वह समय होता है जब पानी से बढ़ने वाले रोगों का खतरा बढ़ जाता है और स्वच्छता की उपेक्षा गंभीर बीमारियों को जन्म दे सकती है। लेकिन हमारे पारंपरिक समुदायों ने इस खतरे को बहुत पहले से पहचाना और ऐसे उपायों को अपनाया जो आज भी स्वास्थ्य और स्वच्छता संरक्षण के श्रेष्ठ उदाहरण हैं। यदि इन्हें पुनः सक्रिय किया जाए, तो न केवल बीमारियों से बचा जा सकता है, बल्कि सामूहिक जिम्मेदारी की भावना भी मजबूत होती है।

पेयजल स्रोतों की प्राकृतिक सुरक्षा

कुर्छ, बावड़ी और अन्य जल स्रोत वर्षों से ग्रामीण जीवन की धुरी रहे हैं। इन स्रोतों को केवल पानी भरने की जगह नहीं, बल्कि जीवनदायिनी स्थान माना जाता रहा है। इसीलिए इन्हें शुद्ध और सुरक्षित रखने के लिए पारंपरिक तरीकों का सहारा लिया गया। कुओं के चारों ओर तुलसी, नीम और अन्य औषधीय पौधे लगाए जाते थे, जो हवा को शुद्ध करने के साथ-साथ आसपास के कीटों को भी दूर रखते हैं। नीम का जीवाणुरोधी गुण वातावरण को रोगमुक्त बनाए रखने में सहायक होता है।

कुर्छ की दीवारों पर गोबर और नीम की पत्तियों का लेप किया जाता था। गोबर में प्राकृतिक जीवाणुनाशक गुण होते हैं और नीम का मिश्रण उसे और प्रभावशाली बना देता है। यह परंपरा कुर्छ के पानी को कीटाणु रहित बनाए रखने में मदद करती थी। यह सरल, सस्ता और प्रभावशाली तरीका आज के आधुनिक जल शोधन उपायों के सामने भी टिकाऊ विकल्प बन सकता है।

वर्षा जल से संक्रमण रोकने की सामूहिक रीति

मानसून से पहले गाँवों में सफाई अभियान चलाने की परंपरा थी, जो केवल एक स्वच्छता कार्य नहीं बल्कि पूरे गाँव की सामूहिक सहभागिता का प्रतीक था। नालियों की सफाई, जमे हुए कचरे का निकासन और कीचड़ युक्त स्थानों पर राख और चूने का छिड़काव किया जाता था। राख नमी सोखने में मदद करती है और कीटों के प्रजनन को रोकती है, वहीं चूना जीवाणु और वायरस को नष्ट करने का काम करता है। यह परंपरा गांव के वातावरण को रोगमुक्त और मानसून के लिए तैयार करने का पारंपरिक विज्ञान था। आज जब जल जनित बीमारियाँ बच्चों, बुजुर्गों और गर्भवती महिलाओं पर ख़ासा प्रभाव डालती हैं, तब इन परंपरागत उपायों को पुनः अपनाना अत्यंत आवश्यक है। न केवल इन उपायों का प्रचार-प्रसार होना चाहिए, बल्कि समुदाय के हर वर्ग - विशेषकर महिलाओं, बच्चों और युवा समूहों को इन गतिविधियों में शामिल किया जाना चाहिए।

सामाजिक और सांस्कृतिक संरक्षण

वर्षा ऋतु केवल कृषि का मौसम नहीं है, बल्कि यह सामाजिक और सांस्कृतिक चेतना को भी सजीव करता है। हमारी परंपराएं प्राकृतिक आपदाओं और पर्यावरणीय असंतुलन का उत्तर केवल तकनीक से

का उपयोग और गाँव के अन्य परिवारियों को ज्ञान देने की भी जिम्मेदारी संभाल रही है।

अब कमला बेन ग्राम पंचायत की बैठकों में भाग लेती हैं, जहाँ वे शिक्षा, महिला स्वास्थ्य, स्वच्छता, और पर्यावरण जैसे मुद्दों पर खुलकर बात करती हैं। जहाँ कभी महिलाएं पंचायत तक नहीं पहुंचती थीं, वहां अब कमला बेन जैसी महिलाएं नीतियों और निर्णयों में भागीदारी निभा रही हैं।

समाज पर प्रभाव और व्यापक परिवर्तन

कमला बेन की इस यात्रा ने कई स्तरों पर गहरा प्रभाव डाला है। उनकी पहल ने न केवल उनके परिवार को आर्थिक रूप से मजबूत किया, बल्कि पूरे गांव में एक सामूहिक बदलाव की नींव रखी:

- पारंपरिक और जैविक खेती को पुनर्जीवित किया गया
- देशी बीजों का संरक्षण और वितरण सुनिश्चित हुआ
- महिलाओं की भागीदारी और नेतृत्व को बढ़ावा मिला
- स्वास्थ्य और पोषण के प्रति जागरूकता फैली
- स्थानीय अर्थव्यवस्था को मजबूती मिली

कमला बेन की कहानी यह दर्शाती है कि सीमित संसाधनों के बीच भी असाधारण बदलाव संभव है — बशर्ते आत्मविश्वास, सीखने की इच्छा, और सामुदायिक सहयोग हो। उन्होंने न केवल बाल विवाह जैसे सामाजिक बंधनों को तोड़ा, बल्कि यह भी सिद्ध किया कि महिलाएं यदि चाहें, तो खेती, नेतृत्व और नवाचार में अग्रणी भूमिका निभा सकती हैं।

आज कमला बेन एक किसान भर नहीं हैं — वे एक आंदोलन, एक बदलाव की मिसाल हैं। कमला बेन कहती है कि असली बदलाव किसी सरकार या योजना से नहीं, बल्कि समाज के मूल से आता है, जहाँ एक महिला अपने खेत से न केवल अन्न उपजाती है, बल्कि पूरे समाज को संस्कार, स्वराज और संबल देती है।



आदिवासी समुदायों ने प्रकृति के साथ सहजीवन का एक अनूठा रिश्ता सैकड़ों वर्षों से कायम रखा है , आदिवासी परिवारों ने बारिश के मौसम में जल, मृदा, बीज, वन, पशु, स्वास्थ्य और पारिस्थितिकी संरक्षण के लिए परंपरागत उपाय विकसित किए हैं। ये उपाय केवल तकनीकी समाधान नहीं हैं, बल्कि जीवन जीने का दर्शन, सामुदायिक उत्तरदायित्व और प्रकृति के प्रति गहरी श्रद्धा का प्रतीक है, जो आज जलवायु संकट के दौर में भी हमें टिकाऊ और न्यायपूर्ण संसाधन उपयोग का मार्ग दिखाते हैं।

आदिवासी समुदायों की ये प्रथाएँ न केवल पर्यावरणीय संरक्षण की दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं, बल्कि सामाजिक एकता, सांस्कृतिक निरंतरता और आर्थिक आत्मनिर्भरता को भी बढ़ावा देती हैं। इस लेख में हम इन परंपराओं को नौ प्रमुख श्रेणियों में विभाजित कर विस्तार से समझेंगे, जो बारिश के मौसम में हमारे समुदाय द्वारा अपनाई जाती हैं।

जल संरक्षण की परंपराएँ

1. वर्षा पूर्व मरम्मत और जल नीति संवाद बैठक

मानसून आगमन से पहले आदिवासी समुदाय सामूहिक श्रम के माध्यम से जल संरक्षण संरचनाओं की मरम्मत करते हैं। तालाबों की खुदाई, तटबंधों की मरम्मत और नालियों/नालों की सफाई को सामुदायिक जिम्मेदारी माना जाता है। इस प्रक्रिया को ‘जल-नीति संवाद बैठक’ के तहत नियोजित किया जाता है, जिसमें गाँव के लोग एकत्र होकर जल संरक्षण की रणनीति बनाते हैं। उदाहरण के लिए, समुदाय में सक्षम समूह, ग्राम स्वराज समूह, बाल स्वराज समूह, कृषि एवं आदिवासी स्वराज संगठन की बैठक, यह एक सामाजिक और सांस्कृतिक आयोजन होता है, जिसमें सभी आयु वर्ग के लोग हिस्सा लेते हैं। यह प्रथा सामुदायिक एकता को भी प्रोत्साहित करती है।

2. तालाब, बाँध और चेकडेम, एनिकट – जल का सामूहिक संग्रहण

आदिवासी समुदाय ने जल संरक्षण के लिए अनेक परंपरागत संरचनाएँ विकसित की हैं। आदिवासी समुदाय ‘चेकडेम, नालों की सफाई, छोटी-बड़ी नहरों की सफाई, मेड़बंदी, नाड़ी और ‘तालाब’ जैसी संरचनाओं का निर्माण और सफाई करते हैं। ये संरचनाएँ वर्षा जल को संग्रहित करती हैं और सूखे के समय खेती, पशुपालन और घरेलू उपयोग के लिए जल उपलब्ध कराती हैं। समुदाय द्वारा परम्परागत हलमा कर बनाए गए तालाब, चेकडेम न केवल जल संचय करते हैं, बल्कि भूजल स्तर को बढ़ाने में भी मदद करते हैं। ये संरचनाएँ स्थानीय मिट्टी और पत्थरों का उपयोग करके बनाई जाती हैं, जो कम लागत में प्रभावी होने के साथ-साथ पर्यावरण के अनुकूल भी हैं।

मृदा संरक्षण की विधियाँ

मेड़बंदी

आदिवासी क्षेत्र में पहाड़ी ढलान वाले खेतों पर मेड़ बनाई जाती है। ये संरचनाएँ वर्षा जल को रोककर मिट्टी के कटाव को नियंत्रित करती हैं। समुदाय में इन विधियों का उपयोग करके मिट्टी की उर्वरता को बनाए रखते हैं। मेड़बंदी करने से जल धीरे-धीरे मिट्टी में रिसता है, जिससे भूजल स्तर बढ़ता है और फसलों को पर्याप्त नमी मिलती है। यह काम आदिवासी समुदाय निरंतर बारिश के मौसम में करते है । बारिश में अगर ऐसा नही करते है तो खेत की मृदा पोषण क्षमता कम होती है और फसल खराब होने की अधिक सम्भावना रहती है । हमें यह तरीके अपनाते रहना चाहिए साथ ही युवाओ और बच्चों को इसके बारे में जानकारी देते रहे ।

खेतों में खाखरा और अन्य पत्तियों का ढ़काव

आदिवासी समुदाय बारिश के दिनों में समुदाय फसल अवशेषों जैसे खाखरा और अन्य पत्तियों को खेतों में फैलाकर मिट्टी में नमी बनाए रखते हैं। यह विधि मिट्टी की उर्वरता को बढ़ाने के साथ-साथ वर्षा जल के वाष्पीकरण को कम करती है। इस प्रथा से मिट्टी की जैविक सामग्री में सुधार होता है, जिससे फसल उत्पादकता स्थिर रहती है। लेकिन वर्तमान में यह कम होती जा रही है । अब हमें इसे जीवित करने के लिए पुनः पहल करने की आवश्यकता है।

बीज संरक्षण की परंपराएँ

वाहन चलाते समय हेलमेट उपयोग करने के साथ गाड़ी की स्पीड कम ही रखे... क्योंकि परिवार आपकी प्रतिक्षा में है.....



